OPEN ACCESS
Int. Jr. of Contemp. Res. in Multi. *PEER-REVIEWED JOURNAL* *Volume 4 Issue 3 [May- Jun] Year 2025*

Review Article

भारतीय लोकतंत्र में लोक सेवाओं की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. रामदीन कड़ेला
प्राचार्य, श्री आई जी महाविद्यालय, बिलाड़ा, जोधपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author: * डॉ. रामदीन कड़ेला

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.15543711

सारांश

लोक सेवा का आशय सामान्य रूप से सरकारी सेवकों के ऐसे समूह अथवा वर्ग से होता है जो राजनीतिक कार्यों से पृथक रहते हुए राज्य के दीवानी मामलों का प्रबंध करते है। आधुनिक युग में लोक सेवा सरकार के नियंत्रण तथा संरक्षण में कार्यरत वे सेवीवर्ग है जो शासन की नीतियों, कार्यक्रमों तथा विधियों के क्रियान्वयन में संलग्न है ताकि राज्य विकास कर सकें। भारतीय शासन सरंचना का एक बुनियादी तत्त्व निष्पक्ष, कुशल और निर्भिक लोक सेवा है जो कार्यपालिका का महत्त्वपूर्ण भाग होती है। भारत जैसे देश में, जो कि एक लोकतांत्रिक कल्याणकारी राज्य है, लोक सेवा की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। प्रभावी और सक्षम संस्था एक सफल शासन व्यवस्था की जरूरत है।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2583-7397
- **Received:** 09-05-2025
- **Accepted:** 26-05-2025
- **Published:** 28-05-2025
- **IJCRM:**4(3); 2025:213-215
- **©2025, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

रामदीन कड़ेला. भारतीय लोकतंत्र में लोक सेवाओं की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन, India. Int J Contemp Res Multidiscip. 2025;4(3): 213-215.

Access this Article Online

www.multiarticlesjournal.com

मूलशब्द: लोक सेवा, भारतीय प्रशासन, नौकर शाही, परिवर्तन, अधिकारी तंत्र

प्रस्तावना

लोक नीति के रूप में अभिव्यक्त राज्य की इच्छाओं को क्रियान्वित करने का प्रमुख साधन 'लोक सेवाएं' है। राज्य संबंधी दर्शन अब अहस्तक्षेप नीति से हटकर सामाजिक कल्याण की नीति पर आधारित हो गया है, इस विकास के साथ आधुनिक राज्य ने बहुविध कार्यों का उत्तरदायित्व ग्रहण कर लिया है। आधुनिक प्रशासकीय राज्यों के जटिल और बहु आयामी कार्यों को करने के लिए सुसंगठित लोक सेवाओं का होना अत्यंत आवश्यक है। नीति, नियमों तथा कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने के लिए प्रशासन जो भी कार्यवाही करता है, वे सब लोक सेवकों के द्वारा ही सम्पन्न की जाती है। जिन दिनों सरकारें 'अहस्तक्षेप नीति' में विश्वास करती थी, उन दिनों राज्य का कार्य क्षेत्र मात्र शांति और व्यवस्था बनाये रखने तक ही सीमित था। परन्तु इन दिनों औद्योगिक क्रांति, तकनीकी क्षैत्रों में अत्यधिक प्रगति होने एवं लोक कल्याणकारी समाजवादी विचारधारा अपनाये जाने से राज्य के कार्यक्षैत्र का

© 2025 डॉ. रामदीन कड़ेला. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

असाधारण रूप से विस्तार हुआ है। राज्य लोक सेवकों के माध्यम से ही अपने बढ़े हुए उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है।

भारत में लोक सेवा का लंबा इतिहास रहा है। प्राचीन भारत में इसका विस्तृत विवरण मगध साम्राज्य के निर्माता आचार्य चाणक्य के अर्थशास्त्र में मिलता है। मौर्य प्रशासन में लोक सेवकों को अध्यक्षाश एवं राजुका के नाम से नियुक्त किया जाता था। लोक सेवा अर्थात् सिविल सेवा शब्द की शुरूआत भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी में व्यापारिक तथा प्रशासनिक कार्य करने वाले सेवीवर्गों के लिए हुई।

ब्रिटीश राज इण्डियन सिविल सर्विस (ICS) को भारतीय जनमानस शोषण का उपकरण मानता था जो ब्रिटीश औपनिवेशिक हितों के संरक्षण के लिए उपयुक्त सेवा थी। उनका ध्येय कुशल प्रशासन, नियमों का कठोरता से पालन और कानून व्यवस्था बनाए रखना मात्र था न कि जनकल्याण से संबंधित कार्यक्रमों को लागू करना।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन 1858 में समाप्त हो गया और ब्रिटीश राज को सत्ता का हस्तांतरण कर दिया गया। 1919 के भारत शासन अधिनियम द्वारा लोक सेवाओं को सुव्यवस्थित रूप देने का प्रयास किया गया। 1935 में अंतरिम शासन लागू होने से लोक सेवा में भारतीयों का वर्चस्व स्थापित होना शुरू हुआ।

1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 में नया संविधान लागू होने के साथ ही भारतीय सिविल सेवा (ICS) का स्थान भारतीय प्रशासनिक सेवा (ICS) ने ग्रहण कर लिया। भारतीय प्रशासनिक सेवा प्रशासनिक प्रणाली में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने वाले पदों को भरने के लिए एक विशिष्ट समूह के रूप में उभरी।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर और सरदार वल्लभ भाई पटेल नौकरशाहों के नए अभिभावक बनें और देश की लोकतांत्रिक संघात्मक व्यवस्था में आमूल चूल परिवर्तन करने के उपरांत भी भारत के गणतंत्रवादी संविधान में यह निर्णय लिया गया कि 'इण्डियन एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस' तथा 'इण्डियन पुलिस सर्विस' नाम की अखिल भारतीय सेवाओं को जीवित रहने दिया जाए। आजादी के बाद लोक सेवाएं एक सशक्त एवं केन्द्रीय तत्त्व के रूप में उभर कर सामने आयी है।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद लोक सेवा में नए समाजवादी राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन अपेक्षित था। लोक सेवकों को केवल कानून के रक्षकों से बदलकर सामाजिक कल्याण और आर्थिक पुनर्निर्माण करने वाले अधिकारियों का रूप देना था।

भारतीय लोक सेवा ने बड़ी सहजता के साथ अपने आपकों लोकतंत्र तथा लोकप्रिय नियंत्रण के अनुरूप बना लिया।

औपनिवेशिक चंगुल से मुक्त होने के बाद भारत सुनियोजित तरीके से क्रांतिकारी सामाजिक-आर्थिक पुनर्निर्माण में जुट गया। राजकीय गतिविधियों की मुख्य चिंता राजस्व-उगाही तथा कानून-व्यवस्था की बहाली के बजाए प्राकृतिक एवं मानव संसाधनों के तीव्र विकास, निर्धनता उन्मूलन, कुपोषण-निवारण तथा जनसमूह के सामान्य जीवन स्तर को उठाने पर केन्द्रित हो गई। प्रशासन अब 'कार्याधिशासी' न होकर 'प्रबंधक' की भूमिका निभाने लगा। वस्तुतः स्वाधीनता के बाद भारत में लोक सेवा सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन लाने वाले यंत्र के रूप में अवतरित हुई है। भारत जैसे विकासशील देश में लोक सेवाओं पर नए कार्यों एवं उत्तरदायित्वों को वहन करने का भार आ पड़ा है। उन्हें सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के लिए नित नए प्रगतिशील कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करना है। आर्थिक कार्यक्रम हो अथवा ग्रामीण विकास कार्यक्रम अथवा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम, सभी का सफल क्रियान्वयन लोक सेवा की निष्ठा और दक्षता पर निर्भर है। यही नहीं, स्वतंत्र भारत में लोक सेवा पर सरकारी स्वामित्व वाली औद्योगिक तथा वाणिज्यिक प्रयोजनाओं के प्रबंध का भार भी आ पड़ा है।

स्वतंत्रता के पश्चात दो मूल परिवर्तन हुए जिन्होंने लोक सेवा की भूमिका को बहुत अधिक प्रभावित किया। प्रथम, संसदीय प्रजातंत्रिक व्यवस्था को स्वीकार करने के साथ ही लोक सेवा राजनीतिक कार्यपालिका के प्रति जवाबदेय हो गयी। द्वितीय, लोक सेवा विकास का एक महत्त्वपूर्ण साधन बन गयी।

राज्य के प्रकार्यो में वृद्धि, बढ़ती हुई जन-आकांक्षाएं और विज्ञान एवं तकनीकी विकास के साथ सरकार की भूमिका में भी व्यापक परिवर्तन आया है। इसके परिणाम स्वरूप प्रशासन को भी तदनुरूप एवं प्रभावी प्रतिक्रिया करनी पड़ती है। यह प्रशासनिक अनुक्रिया लोक सेवा के समुचित एवं विवेक सम्मत संगठन से ही संभव है क्योंकि सक्षम लोक सेवा के अभाव में प्रशासन की भूमिका पूरी तरह निरस्त हो जायेगी।

लोक कल्याणकारी राज्य के रूप में भारत की प्रशासनिक गतिविधियों में बड़े पैमाने पर वृद्धि हुई है। विगत दशकों में तथा 21वीं सदी के इन प्रारंभिक वर्षों में सुशासन की अवधारणा को सार्थक बनाने के लिए भारत के समक्ष यह चुनौती है कि वह प्रशासनिक गतिविधियों को तार्किकता प्रदान करे। राष्ट्रीय, राज्यीय तथा स्थानीय स्तर पर लोक सेवा सरंचना, प्रक्रिया एवं व्यवहार में सकारात्मक सुधार करते हुए प्रशासनिक भूमिका को गुणात्मक बनाने का प्रयत्न करना अपरिहार्य हुआ है।

औद्योगीकरण और नगरीकरण के फैलाव, राज्य के राजनीतिक दर्शन में बदलाव तथा जनसंख्या में हो रही वृद्धि की निरंतरता ने भारतीय लोक सेवा को नए सिरे से संरचना प्रदान करने का दबाव विकसित किया है। आज लोक सेवा संपूर्ण समाज तथा राजनीतिक अर्थव्यवस्था से संबंधित है। सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक वातावरण लोक सेवा से प्रभावित है। इन परिस्थितियों में लोक सेवा से संबंधित संगठनों एवं पदाधिकारियों के समक्ष यह चुनौती है कि नयी समस्याओं का प्रभावशाली ढंग से सामना करें।

सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय सुनिश्चित करने हुए संविधान की प्रस्तावना में निहित भावनाओं के तहत लोक सेवा को लोकतांत्रिक, विकेन्द्रीकृत एवं मानवीय बनाना आवश्यक है। भारत में सामाजिक हिंसा एवं अलगाववाद तथा आतंकवाद जोरो पर है। ऐसी स्थिति में प्रशासनिक संस्कृति को सामाजिक सौहार्द बनाये रखने के लिए नए सिरे से विकसित करने की आवश्यकता है।

राजनीतिक, आर्थिक और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में तीव्र और मौलिक परिवर्तन हो रहे है। इनकी वजह से लोक सेवा में बड़े परिवर्तनों की जरूरत है। वैश्विक अर्थव्यवस्था में हुए महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के कारण एक सक्षम और सुचारू रूप से काम करने वाली लोक सेवा का गठन जरूरी हो गया है।

पारदर्शिता और जवाबदेहिता के अभाव से व्याप्त लोक सेवा को संपूर्ण प्रशासनिक व्यवस्था को सशक्त बनाने हेतु नयी संस्कृति के साथ सम्बद्ध करने की चुनौती राष्ट्र के समक्ष है।

राज्य के विचारधारात्मक दर्शन के पारंपरिक से आधुनिक परिवर्तन के साथ ही प्रशासन की भूमिका में भी आधारभूत परिवर्तन आता है। इस प्रकार युद्धग्रस्तता से 'कल्याणकारिता' की स्थिति में राज्य के परिवर्तन

© 2025 डॉ. रामदीन कड़ेला. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

के साथ ही प्रशासन भी 'कानून व्यवस्था' बनाये रखने की भूमिका से 'विकासोन्मुखी' भूमिका की ओर अग्रसर होता है।

यदि विकास केन्द्रबिन्दु बन जाए, योजना आवश्यक हो जाती है, क्योंकि सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक योजना के माध्यम से ही अल्पतम अवधि में अधिकतम उपलब्धि के लिए समुचित साधन तथा निवेश प्रयोग संभव है। प्रशासन को इस प्रकार नीति सूत्रीकरण, कार्यक्रम अभिकल्पना, प्रयोजना प्रबंध तथा कार्यक्रम मूल्यांकन की ओर ध्यान देना पड़ता है। इन सभी के लिए सक्षम एवं प्रभावी लोक सेवा आवश्यक है।

वैश्वीकरण द्वारा प्रेरित हालिया परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप, देश न केवल बाजारों में, बल्कि अपने प्रशासनिक ढाँचों की गुणवत्ता के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय रूप से प्रतिस्पर्धा कर रहे है। परिवर्तित नीति के अंतर्गत कम निर्धारणात्मक और अधिक बाजार-प्रेरित दृष्टिकोणों में अर्थव्यवस्था के नीतिगत प्रबंधन पर बल देते हुए लोक सेवा की नई भूमिका सुझाई गई है।

आर्थिक प्रणाली में परिवर्तनों में फलस्वरूप लोक सेवा के नियंत्रण और जवाबदेही तथा साथ ही व्यावसायिक दायित्वों की नई परिभाषाओं से संबंद्ध नई मांगे पैदा हुई है।

लोक सेवा के एक साधन के रूप में लोक सेवकों को परिवर्तन के लिए तैयार रहना चाहिये किन्तु आम अनुभव यह रहा है कि वे अपने विशेषाधिकारों और संभावनाओं से जुड़े परिवर्तनों का विरोध करते है ओर इस प्रकार वे स्वयं में ध्येय बन जाते है।

वर्तमान के संदर्भ में जब लोक सेवा की भूमिका का आज परीक्षण किया जाता है तो यह सहज रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय लोक सेवा असंवेदनशील, पदसोपानिक संरचना, अपारदर्शिता, अधिनायकवादी नेतृत्व शैली, भ्रष्टाचार, परिवर्तन विरोधी इत्यादि त्रुटियों की शिकार है। प्रशासनिक गतिविधियों में विशेषज्ञता को नजरअंदाज किया गया है कि प्रशासनिक दक्षता एवं प्रभावशीलता की कीमत पर भारतीय लोक सेवा के पदाधिकारियों के वर्चस्व को बनाए रखा गया है।

भारतीय लोक सेवाएं विकास के कालक्रम से गुजरकर अपने वर्तमान रूप में आयी है, उनमें उनके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही पहलू दृष्टव्य है। कार्यकुशलता, योग्यता, अनुशासन, प्रतिबद्धता, निष्ठा, तटस्थता, नेतृत्व ये सबगुण उन्होंने परम्पराओं से विरासत में पाये हैं, किन्तु जन साधारण से अलगाव, अभिजन वादिता, विविधज्ञ प्रकृति, अंकुशों के अभाव में स्वविवेक से कार्य करने की आदत तथा राजनीतिज्ञों को अपना स्वामी न मानकर अपना सहभागी समझना आदि विशेषताएँ उन्हें आज की स्थिति में एक विडम्बनापूर्ण स्थिति में डालती है।

विभिन्न चुनौतियों, दबावों व विरोधों ने लोक सेवाओं को ऐसी भूमिका के लिए तैयार कर दिया जो इतिहास की आवश्यकता होने के साथ-साथ युग की अनुरूपता की आवश्यकता भी थी। भारतीय लोक सेवाएं संगठनात्मक दृष्टि से अभी भी ऐतिहासिक सीमाओं से बाहर नहीं निकल सकी है, किन्तु बदली हुई परिस्थितियों में उन्हें नयी भूमिकाओं से तथा नये अंकुशों के बीच में अपने आपको प्रस्तुत करने को मजबूर किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. फड़िया, बी.एल., लोक प्रशासन, साहित्य भवन, 2014
2. चक्रवर्ती विद्युत, प्रकाश चंद, भारतीय प्रशासन-विकास एवं पद्धति, सेज पब्लिकेशन, 2017
3. भट्टाचार्य मोहित, लोक प्रशासन के नये आयाम, जवाहर पब्लिशर्स, 2010
4. अवस्थी एवं अवस्थी, भारतीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 2012
5. माहेश्वरी राम, भारतीय प्रशासन, ओरियंट ब्ल्ैक स्वॉन प्राईवेट लिमिटेड, 2009
6. माहेश्वरी, एस. आर., पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया-द हायर सिविल सर्विस, आक्सफोर्ड, इंडिया पेपर बैक, 2005

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

© 2025 डॉ. रामदीन कड़ेला. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/